राम संदेश

भक्ति, ज्ञान एवं कर्मयोग की आध्यात्मिक पत्रिका

पावन हों शिक्षा संस्कार
शुद्ध आचरण का आधार

काम काज हो या व्यापार
सभी जगह अच्छा व्यवहार

मित्र पड़ोसी घर परिवार
संबंधों में निश्छल प्यार

यदि हो पाएं, तो संसार में
होगा सुख शांति प्रसार

वर्ष 59 अप्रैल–जून 2013 अंक 2

रामाश्रम सत्संग, गाज़ियाबाद

विषय-सूची

(अप्रैल-जून 2013)

क्रमांक			पृष्ठांक
1.	जैसेहि	*भजन*	01
2.	आध्यात्म विद्या का सार	*लालाजी महाराज*	02
3.	दुःखों का कारण व उपरामता	*डा. श्रीकृष्णलालजी महाराज*	07
4.	सर्व रोग की औषधि : नाम	*डा. करतार सिंह जी महाराज*	11
5.	करतार स्तुति	*राजीव रंजन सहाय*	20
6.	जो जेता	*गुरुदेव की जन्म जयंती व पुण्य तिथि पर*	22
7.	दिव्य देन	*संस्मरण*	26

राम ॐ संदेश

संस्थापक

ब्रह्मलीन परमसंत डा. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज

संरक्षक

ब्रह्मलीन परमसंत डा. करतार सिंह जी

सम्पादक

डा. शक्ति कुमार सक्सेना

(अध्यक्ष एवं आचार्य)

वर्ष 59 ✡ त्रैमासिक पत्रिका ✡ अप्रैल–जून 2013 ✡ अंक 02

भजन

जैसेहि राखौ तैसेहि रहौं।
जानत हौ सब दुःख सुख जन को मुखकरि कृपा कहौं।।
कबहुँक भीजन देत कृपा करि कबहुँक भूक सहौं।
कबहुँक चढ़ौ तुरंग महागज कबहुँक भार बहौं।।
कमल नयन घनस्याम मनोहर अनुचर भयो रहौं।
सूरदास प्रभु भगत कृपानिधि तुम्हरे चरन गहौं।।

परमसंत महात्मा रामचन्द्र जी महाराज

अध्यात्म विद्या का सार

हमारे रामाश्रम सत्संग के अधिष्ठाता परमपूज्य महात्मा रामचन्द्रजी महाराज (उर्फ़ लालाजी, फ़तेहगढ़ निवासी) की आध्यात्मिक विद्या का सार उनके गुरुभाई व चचेरे अनुज पूज्य महात्मा कृष्ण स्वरूप साहब, जयपुरवालों ने कलमबद्ध किया था।

उसी लिपिबद्ध सामग्री को क्रमबद्ध रूप से हमारे गुरुदेव पूज्य डा. श्रीकृष्णलाल जी महाराज ने वर्त्तमान पुस्तक 'फ़कीरों की सात मंजिलें' में सुधार करके सरल भाषा में प्रकाशित करवाया था।

ऐसी बहुमूल्य अध्यात्म–शिक्षा को प्रेमीजनों एवं सुधी पाठकों के लाभार्थ, पूज्य गुरुदेव की प्रस्तावना के साथ प्रकाशित किया जा रहा है।

– सम्पादक

प्रस्तावना

सन्तवर डाक्टर कृष्ण स्वरूप साहब, (जयपुरी) परमसंत महात्मा रामचन्द्र जी महाराज, (फ़तेहगढ़ी) के छोटे गुरुभाई थे। आपने महात्मा जी की सेवा में रहकर ब्रह्मविद्या की पूर्ण दक्षता प्राप्त की, और उनकी आज्ञानुसार जीवन भर राजस्थान में ब्रह्मविद्या कर प्रचार करते रहे। उनके देहावसान के कुछ माह पूर्व जब मैं उनकी सेवा में उपस्थित हुआ, तब उन्होंने मुझे यह पुस्तक दी ताकि मैं उसे पढ़कर जो त्रुटियाँ उसके लिखने में रह गई हों, उन्हें दूर करके व आवश्यक सुधार करने के पश्चात्त उसे प्रकाशित करा दूँ। मुझे हार्दिक खेद है कि यह कार्य उनके जीवन काल में पूर्ण न हो सका। अब यह पुस्तक त्रुटियाँ दूर करके और आवश्यक सुधार के

पश्चात् सत्संगी भाइयों की भलाई के लिए आपके सामने प्रस्तुत की जा रही है।

इसमें संदेह नहीं कि लेखक ने फ़ारसी मिश्रित उर्दू भाषा का ही प्रयोग इस पुस्तक में किया है। वर्तमान हिन्दी युग के पाठकों को इस पर सम्भवतया आपत्ति हो, परन्तु जहाँ तक संभव हो सका है भाषा सरल बनाने का प्रयास किया गया है और कठिन शब्दों का अर्थ उनके पास ही कोष्ठकों (ब्रेकेट) में दे दिया गया है। आशा है इतने से बहुत काम चल जायेगा और मतलब अच्छी तरह समझ में आ जाएगा। सारी भाषा को ठेठ हिन्दी में परिवर्तन कर देना तो पूरी पुस्तक को ही बदल देना होगा, और ऐसा करने से लेखक के जो मौलिक उद्‌गार हैं वे नष्ट प्रायः हो जायेंगे।

यह पुस्तक एक अनमोल रत्न है जिसमें एक उच्च कोटि के सन्त के आध्यात्मिक जीवन के गूढ़ और आत्मिक अनुभव खोल-खोलकर रखे गये हैं। आशा है कि पाठक, विशेषकर सत्संगी भाई, इसे ध्यानपूर्वक पढ़ेंगे और अपने जीवन में उतारने की चेष्टा कर लाभान्वित होंगे।

फकीरों की सात मंजिलें (संत सप्त दर्शन)

आसमान में हर तरह की आवाजें सूक्ष्म और स्थूल भरी हुई हैं, मगर उन सूक्ष्म आवाजों को सिर्फ़ वही सुन सकता है जिसने अपने कानों के पर्दे को लतीफ़ (सूक्ष्म) बनाकर उस दर्जे की आवाजों के साथ मिला लिया हो जिस दर्जे की आवाजें हो रही हैं।

हमारे बाहरी कान किसी एक प्रकार के परमाणुओं (cells) के बने हुए हैं और अंदर के कान किसी दूसरी प्रकार के परमाणुओं के बने हैं। बाहरी आवाज़ जो सुनाई दे जाती है, वह उन्हीं मसालों की होती है जिनसे बाहरी कानों के परमाणु बने होते हैं और अंदर की आवाज़ जो घट-घट में हो रही है, वह उस मसाले से बनी होती है जिस मसाले

से हमारे अंदर के कानों के परमाणु बने होते हैं। इसलिए बाहरी कानों से हम बाहरी आवाजों को ही सुन सकते हैं ओर अंदर के कानों से अंतर की आवाज़ों को। ब्रह्माण्ड में और हमारे अपने अंदर अनेक प्रकार के शब्द हो रहे हैं लेकिन हम केवल उन्हीं शब्दों को ही बाहर और अंदर सुन सकते हैं जिनसे हमारे बाहर और अंदर के कानों की मुताबिक़त (समानता) होती है। बाक़ी आवाज़ें जो और अधिक सूक्ष्म हैं, हम नहीं सुन सकते। यही हाल आँखों के प्रकाश के विषय में है। हमारी आँख उसी प्रकाश का ज्ञान हासिल कर सकती है जो उसी मसाले से बना है जिससे हमारी आँख बनी है, वर्ना नहीं।

सब ही प्राणी किसी न किसी शक़्ल में ज़बान से अपने ख़्यालात ज़ाहिर करते हैं मगर उनको सिर्फ़ वही सुन सकता है जिसने अपने कान की ताक़त को उस शब्द के मुताबिक बना लिया है, जो ज़बान से निकल रही है। इंसान इंसान की ही बात सुनता है क्योंकि इनमें हम–जिन्सियत (एक जैसी हैसियत) है। चींटी से चींटी मुँह मिलाकर बात करती है क्योंकि उनमें यकसानियत (समानता) है। आवाज़ सिर्फ़ वही सुनी जा सकती है जिसके लिये कानों में क़बूलियत का माद्दा (ग्रहण शक्ति) हो, फिर चाहे आवाज़ मोटी हो या बारीक। इसी तरह रोशनी की कमी या ज़्यादती दोनों आँखों के लिये बेकार है। नज़र सिर्फ़ वही चीज आँक सकती है जिसको आँख क़बूल करे। इसी तरह हमारी नाक और ज़बान का हाल है।

दुनियाँ में सब कुछ है लेकिन जैसा जिसका ज़र्फ (अधिकार) है उसको उतना ही मिल सकता है, ज़्यादा कैसे नसीब हो। जो मिलने वाला है वह मिलकर रहेगा, इसमें ज़रा भी शक नहीं है।

मक़्सूम, मुक़द्दर और क़िस्मत का साफ़ और दूसरा नाम ज़र्फ़ (काबिलियत, योग्यता या अधिकार) है। यही नसीब है, नसीब के और कोई मायने फ़िज़ूल हैं। जिसके जिस्मानी (शारीरिक), दिली, अक़्ली और दिमागी आज़ाँ (इन्द्रियों) ने जहाँ तक अपनी तकमील (पूर्णता) कर ली

है, बस उसको उतना ही इल्म होगा और वहीं तक समझ होगी। अगर किसी को इससे इंकार है तो हमको लड़ाई करने की ज़रूरत नहीं है। यह मालूम हो जाये कि किसको कितना हौसला है ओर कहाँ तक उसको पाने, लेने, देने, और खुद फायदा उठाने का और दूसरों को फ़ायदा पहुँचाने का हक़ है। यही सबब (कारण) है कि हम बहस मुबाहिसा (तर्क–वितर्क) वगैरा से भागते रहते हैं। आईना देखने को आँख की ज़रूरत है। अन्धों को आईना दिखाना ग़लती है। वह क्या ख़ाक समझेगा।

हम जानते हैं कि रोशनी और आवाज़ की दुनियाँ में खास हैसियत है। नादान कहता है 'कुछ भी नहीं'। बहुत अच्छा, कुछ भी नहीं सही। यह भी सच्चा हम भी सच्चे क्योंकि सच्चाई सिर्फ़ निस्बती (अपेक्षा या रिलेटिव) होती है और निस्बत के दर्जे होते हैं। उल्लू को सूर्य नज़र नहीं आता, चिमगादड़ को रोशनी दिखाई नही देती तो इनको बताने का क्या फ़ायदा।

योगीराज भर्तृहरि जो कह गये हैं कि इंसानी क़िस्मत एक छोटी लुटिया के बराबर है। चाहे उसको तालाब में डालो या समुद्र में, पानी उसमें उतना ही आवेगा जितनी बर्तन की ज़रफ़ियत (घनत्व) है। इसी तरह आस्तिक व नास्तिक दोनों अपनी जगह पर सच्चे हैं। जो नहीं देखता वो कैसे किसी ख़ास हस्ती का क़ायल हो। जो देखता है उसको क्या हक़ है कि न देखने वाले के साथ लड़ाई करे। हाँ जब तक देखने और दिखाने की लियाक़त से खाली है तब तक उसका कहना सुनना बेसुद है।

इसका मतलब है कि कुदरत में हर जगह क़ाबिलियत (योग्यता) अधिकार व संस्कार का सवाल रहता है। बग़ैर अधिकार व संस्कार के कुछ नहीं मिलता और यही अधिकार व संस्कार परमात्मा के असली हुक्म पर मौकूफ़ (निर्भर) है।

बेवक्त किसी को भला कुछ मिला है ?
पत्ता बग़ैर हुक्म के कोई नहीं हिला है।

इसलिए जो इल्म इरफ़ान (ज्ञान) से बाख़बर हैं, उनको सिर्फ़ अपने काम पर लगे रहना चाहिए। और दूसरों की रुहानी तकमील (पूर्णता) वक्त के हवाले कर देनी चाहिये। 'क़ब्ल–अज़–मर्ग बावैला' (मरने से पहले ही शोर मचाना) फ़िज़ूल है। हम धीरे–धीरे अपनी जिन्दगी के मरहलों (समस्याओं) को तय करते चले जाते हैं। जो हालत आज है वो कल नहीं थी और जो कल होगी वह आज नहीं है। हम सब लोग तबदीली की हालत में रहते हैं। जब यह अच्छी तरह समझ लिया कि हालतें बदलती रहती हैं तो फिर किसी से क्यों उलझना। फिर क्यों न इंसान सबके साथ मिलजुल कर अपना काम करे। खैरियत भी इसी बात में है कि सिर्फ़ अपनी तरफ़ नज़र रहे और जीवन के व्यवहारिक रूप का ज्ञान रखते हुए अपनी ज़ाती (निजी) भलाई का ख़्याल हो –

जन्म–मरण दुख यादकर, कूड़े–काम निवार,
जिन–जिन पंथों चालना, सोई पंथ संवार।
अपनी ओर निहारिये, औरों से क्या काम,
सकल देवता छोड़कर, भजिये गुरु का नाम।

घृणा

''उसने मुझे गाली दी, उसने मुझे पीटा, उसने मुझे अपमानित किया'' ऐसे विचार जिसके मन में फँसे रहते हैं वह घृणा को नहीं त्याग सकेगा। जिनके हृदय ऐसे विचारों से उन्मुक्त हैं घृणा उन पर अपना आधिपत्य जमाने में असफल रहती है। घृणा कभी घृणा से दूर नहीं होती। इस बुराई को केवल प्रेम ही दूर कर सकता है।

– **भगवान गौतम बुद्ध**

दुःख वर्षा की धारा की भाँति कीचड़ उत्पन्न करता है, किन्तु गुलाब के फूल भी खिलाता है। – **ऑस्टिन मैले**

प्रवचन गुरुदेवः डा. श्रीकृष्ण लालजी महाराज

हमारे दुखों का कारण

आदमी तकिये के ग़िलाफ़ की तरह है। एक ग़िलाफ़ का रंग लाल है, दूसरे का काला, तीसरे का नीला है और चौथे का हरा, मगर रुई सबके अंदर भरी हुई है। यही हालत आदमी की है। एक सुन्दर है दूसरा बदसूरत (कुरूप), तीसरा भक्त है, चौथा बेईमान है किन्तु परमात्मा सबके अंदर बसता है।

आमतौर पर (सामान्यतः) जीव दो तरह के नज़र आते हैं। एक तो वह जिनकी विशेषता छाज़ की सी है और दूसरे वह जो छलनी की विशेषता रखते हैं। छाज़ फिजूल अनाज, भूसी वग़ैरा को बाहर फैंक देता है और अच्छे अनाज को अपने अंदर रख लेता है। बिल्कुल उसी तरह इस प्रकार के लोग बुरी बातों को सुनकर भुला देते हैं और अच्छी बातें अपने अंदर रख लेते हैं। छलनी इसके बिल्कुल विपरीत काम करती है। आटे का जो असली तत्व है छान कर बाहर निकाल देती है और भूसी को अपने अंदर रख लेती है। इस तरह के आदमी दूसरों की अच्छी बातों को तो भूल जाते हैं लेकिन बुरी बातें अंदर रख लेते हैं। यह हालत आम है।

यूरोपियन यानी पश्चिमी सभ्यता की बुराइयों को हम अपने अंदर भर लेते हैं लेकिन अच्छाईयों को भुला देते हैं। परमात्मा को छोड़कर माया के प्रेमी बन गये हैं लेकिन उनकी सभ्यता के कुछ ख़ास गुण जैसे समय की पाबन्दी, स्वदेश प्रेम, परिश्रम और दुख में भी अपने आपको संभाल कर रखना तथा मुसीबतों का दृढ़ता से सामना करना आदि की तरफ ध्यान नहीं देते। यही हमारे पतन का कारण है।

संसारी मनुष्यों का दिल गोबर के कीड़े (गुबरीला) के समान है। यह कीड़ा जब रहेगा गोबर में ही रहेगा, दूसरी जगह रहना पसन्द नहीं

करेगा। अगर तुम उसको कमल के फूल के अन्दर रखना चाहो तो वह बहुत परेशान हो जायेगा। इसी प्रकार संसारी जीव सांसारिक बातों के सिवाय और किसी बात को सुनना पसन्द नहीं करता। जहाँ ईश्वर–चर्चा होती है वहाँ ये कभी नहीं जायेंगे और जहाँ गपशप या तफ़रीह की बातें हो रही हैं वहाँ इन्हें मज़ा और आनन्द मिलता है।

इसी तरह एक और उदाहरण है। मक्खी दो तरह की होती है– एक तो शहद की मक्खी है जो फूलों का रस चूसती है, दूसरी वह है जो गन्दगी और नापाक (अपवित्र) चीज़ों पर बैठना पसन्द करती है। जिन मनुष्यों में परमात्मा का प्रेम है वे ईश्वर चर्चा के अलावा (अतिरिक्त) कोई दूसरी बात नहीं करते, लेकिन संसारी व्यक्ति धन–दौलत की ही चर्चा करेंगे। अगर कोई उन्हें ईश्वर–चर्चा सुनावे भी तो बात काटकर संसार की ही चर्चा ले बैठेंगे।

संसारी व्यक्तियों को चेताना महा–कठिन काम है। वे हर तरह के दुःख और कष्ट संसार में भोगते रहते हैं किन्तु फिर भी सावधान नहीं होते। ऊँट की हालत को सोचो। वह काँटों और कटीली झाड़ियों को खाने का प्रेमी होता है। काँटों से मुँह फटता है, खून निकलता है किन्तु वह काँटे खाना नहीं छोड़ता। इसी प्रकार संसारी व्यक्ति दुख उठाते हैं, नित्य मनुष्यों को दुख दर्द और परेशानियों से मरते देखते हैं लेकिन वे यह कभी नहीं सोचते और न ही चेतते हैं कि इन दुखों से बचने का उपाय निकालें। वे यह भूल जाते हैं कि उनको भी एक दिन मरना है।

दुनियाँ से उपराम होना

आत्मा ऊपर से इन्द्रियों, मन, बुद्धि और खुदी (अहंकार) के पर्दे हटाने के लिए, इस दुनियाँ में भेजी गई है ताकि वह इन पर्दों को अपने ऊपर से अलहदा करके और इनसे उपराम होकर बिलकुल नंगी हो जाय और अपने असली जौहर (मूल तत्व, परमेश्वर) में समा जाय। यही उसके जीवन का लक्ष्य है। इसके लिए आत्मा को शरीर से मिला दिया

गया है और अन्तःकरण (मन, बुद्धि, चित्त, अहंकार) इन दोनों (शरीर व आत्मा) को मिलाये रहता है। इन्द्रियों से भोग कर और बुद्धि से समझकर मनुष्य तमाम दुनियाँ की वस्तुओं और मनुष्यों से प्रेम करता रहता है और जब उसमें सार नहीं पाता बल्कि क्षणभंगुर पाता है तो दुनियाँ से आहिस्ता–आहिस्ता अलहदा होकर उपराम हो जाता है। अपने असली जौहर (ईश्वर) का ही भरोसा रखता है उसी की याद में मग्न रहता है। यही दुनियाँ से उपराम हो जाना है।

ऐसा वह अपनी शक्ति से नहीं कर सकता क्योंकि उसकी आत्मा में वापसी की शक्ति नहीं रही। इसके लिए उसको अपनी बिखरी हुई शक्तियों को इकठ्ठा करना होगा और छुपी हुई आत्मिक शक्तियों को जगाना होगा। यह ऐसे शख़्स (व्यक्ति) की सहायता के बिना नहीं हो सकता जिसने मन और आत्मा की शक्तियों को जगा लिया है और परमात्मा में लीन हो गया है। इसी का नाम गुरु है।

गुरु की मदद से वह इन पर्दों को अपनी आत्मा के ऊपर से हटाकर अपना असली रूप अनुभव करता है और फिर अपने असली जौहर (परमेश्वर) में मिल जाता है। इसलिये गुरु की बहुत ज़रूरत है। बग़ैर सत्गुरु के इस रास्ते में कामयाबी नहीं होती– सन्तों का ऐसा कहना है और अनुभव है।

इस तरह से आत्मा इस हालत पर पहुँचकर अगर पूर्ण–रूप से उसमें लय हो जाय तो शरीर नहीं रहता ओर न उसके पिछले संस्कार बाकी रह जाते हैं। दूसरे अगर सत्पुरुष दुनियाँ में न रहें तो ईश्वर का असली मक़सद दुनियाँ पैदा करने का 'एकोअहं बहुस्यामि' (जैसा मैं एक हूँ, अनेक हो जाऊँ)– पूरा न हो। इसलिए ऐसे सन्तों–महापुरुषों को विशेष रूप में लय होते हुए भी मन के मुकाम पर उतरना पड़ता है जिससे और जीवों का कल्याण हो, और अगर उसके संस्कार बाकी हैं तो वे भी पूरे हो जाएँ। इसलिए सन्त निर्विकल्प समाधि का अनुभव करने के बाद

भी अपने सगुण ईश्वर (यानी गुरु के ध्यान) के स्थान पर उतर आते हैं यानी परमात्मा का अनुभव करने के बाद भी उस स्थान से नीचे उतर कर ईश्वर का दर्शन अपने गुरु–रूप में करते हैं और गुरु को ईश्वर रूप मानते हैं। गुरु मूर्ति ही उनके लिए परमात्मा का सगुण रूप है। इसी जगह गुरु की अहमियत (महानता) का पता चलता है और असली श्रद्धा आती है। ऐसे लोग कभी ईश्वर के निराकार रूप में लय होकर उसके निराकार रूप का अनुभव करते हैं और दुनियावी काम के लिए जो बग़ैर मन की सहायता के नहीं हो सकता, ईश्वर के साकार रूप यानी गुरु के प्रेम का आनन्द लेते हैं।

अपने विरोधी को अनुकूल बनाने का सबसे अच्छा उपाय यही है कि उसके साथ सरल और सच्चा प्रेम करो। वह तुमसे द्वेष करे, तुम्हारा अनिष्ट करे तब भी तुम तो प्रेम ही करो। प्रतिहिंसा को स्थान दिया तो अवश्य गिर जाओगे। अपने हृदय को सदा टटोलते रहना ही साधक का कर्तव्य है – उसमें घृणा, द्वेष, हिंसा, वैर, मान, अहंकार, कामना आदि अपना डेरा न जमा लें। बुरा कहलाना अच्छा है, परन्तु अच्छा कहलाकर बुरा बने रहना बहुत ही बुरा है।

– आचार्य विनोबा भावे

जो कुछ मुझे ज्ञात है वह यही है कि मेरे पास रंच मात्र भी ज्ञान नहीं है।

– सुकरात

पाप तो इतिहास के आरम्भ काल से चला आ रहा है, किन्तु उसकी उपासना हमने अभी आरम्भ की है।

– महात्मा गाँधी

प्रवचन परमसंत डा. करतार सिंह जी साहब

सर्व रोग की औषधि 'नाम'

'ऊँ राम जय राम जय जय राम'–यह जो प्रार्थना है इसको थोड़े शब्दों में समझ लीजिये। ऊँ शब्द की जितनी भी व्याख्या की जाय उतनी कम है, इसी से सारी रचना हुई है। 'ऊँ राम' परमात्मा सर्वव्यापक है 'राम जो सब में रमा हुआ है। प्रत्येक के मन में, तन में, रोम–रोम में वह व्यापक है। 'जय राम' उस महान प्रभु की जो हमारा सच्चा पिता है, हम जय जयकार (स्तुति) करते हैं। 'जय जय राम' अर्थात् तन–मन–ध ान से परम पिता परमात्मा के चरणों में अपने आप को पूर्णतया समर्पण करना है।

स्वामी रामदास जी का जीवन जिन्होंने पढ़ा है वे जानते हैं कि उन्होंने समर्पण के अर्थ केवल शाब्दिक या पुस्तक लिखने के लिए नहीं बतलाये। समर्पण किस प्रकार का होता है वह उन्होंने अपने जीवन के व्यवहार से सिखाया है। उनके अनुसार एवं अन्य महापुरुषों के अनुसार समर्पण का अर्थ यह है कि अपनी गति को परमात्मा की गति में मिला दिया जाय। आप एक यन्त्र बन जायें। जैसे प्रभु चलायें वैसे ही यन्त्र को चलने देना है। परन्तु केवल इतना कहने से ही तृप्ति नहीं होती, यह तो जीवन की साधना का अन्तिम चरण है। साधना का श्रीगणेश कहाँ से होता है? 'ईश्वर सर्वव्यापक है' हम कहते भले ही रहें, लेकिन जब तक उसकी अनुभूति न हो, इस बात को कैसे स्वीकार कर लें?

सब महापुरुष अब तक यही कहते आये हैं कि परमात्मा की कृपा, परमात्मा की प्रेम वृष्टि प्रतिक्षण सब पर एक जैसी पड़ती है, हमें केवल इस वृष्टि को ग्रहण करने का ढंग सीखना है जो बड़ा ही सरल है। सरल सुख आसन पर बैठ जाइये या ज़मीन पर, कुर्सी या खाट पर, जैसे भी आप को आराम मिले बैठें। शरीर ढीला हो और इस ख़्याल को लेकर

बैठें कि ईश्वर की कृपा बरस रही है। अधिक से अधिक पाँच मिनट लगेगें कि आपको इस वृष्टि की अनुभूति होने लगेगी। दो, चार, दस दिन तक यह अभ्यास करते रहें तो यह अनुभूति काफ़ी मात्रा में होने लगेगी। यहाँ तक कि आपको अनुभव होगा कि आपका तन–मन बाहर और भीतर से उस कृपा की फुहार में कपड़े की तरह भीग गया है। यह कोई अंध ाविश्वास की बात नहीं है। बच्चे से लेकर बूढ़े तक प्रत्येक व्यक्ति इसे कर सकता है। समर्पण का श्रीगणेश यहीं से होता है।

धीरे–धीरे परमात्मा की उपस्थिति का भान होने लगता है। जैसे ही हमें यह पता लग जाता है कि वह हमें देख रहा है, हम उसकी सेवा में बैठे हैं, तब हमारे भीतर में भाव और भय उत्पन्न होता है। भाव प्रेम और श्रद्धा को उत्पन्न करता है। भय इस प्रकार का नहीं जैसे बकरी शेर से डरती है। भय इस प्रकार का कि जैसे स्त्री जो कुछ कर्म करती है अपने पति को प्रसन्न करने के लिए करती है और वह यह सोचती रहती है कि कोई बात मैं ऐसी न करूँ कि जिससे मेरा पति असन्तुष्ट हो। इसी प्रकार ऐसा साधक जिसको अनुभूति होने लग जाती है, वह कोई भी कर्म ऐसा नहीं करता जिसके कारण परमात्मा उससे असन्तुष्ट या नाराज़ हो। बच्चे जब कक्षा में देरवते हैं कि अध्यापक बैठे हैं तो वे शरारत करने में संकोच करते हैं। जिस वक्त हमें यह अनुभूति होने लगेगी कि परमात्मा हमारे पास है, वह हमें देख रहा है तब हम बुराई करने में संकोच करेंगे। इसलिये महापुरुष कहते हैं – ''जो तू सुख चाहे सदा, सरन राम की लेय।''

दुनियाँ में जिस आदमी को देखो वो किसी न किसी कारण दुःखी है। महापुरुषों की सेवा में बरसों से हम लोग जाते आये हैं और अपनी तकलीफ़ों को उनसे कहते रहे हैं। यह कोई नई बात नहीं है कि आजकल के लोग ही ऐसी बातें करते हैं, शुरु से ही ऐसा होता आया है। महापुरुषों ने सारे दुःखों से निवृत्त होने के लिए एक ही बात कही है –'सर्व रोग

की औषधि नाम'। सब बीमारियों, सांसारिक व्याधियों की एक ही औषधि है–ईश्वर का नाम, ईश्वर–प्रेम, परमात्मा की शरण लेना यानी अपने आप को पूर्णतया उनके चरणों में समर्पित कर देना। जब हम ईश्वर से प्रेम करने लगते हैं तो प्रकृति की ओर से जो भी दुःख आता है वह हमें दुःखमय प्रतीत नहीं होता। वो ईश्वर की प्रसादी के रूप में अनुभव होता है।

दुःख–सुख की मिलौनी का नाम ही संसार है। परन्तु जब हम ईश्वर से प्रेम करने लग जाते हैं तो हमें ईश्वर की शक्ति मिल जाती है जिससे हमारा मन शुद्ध होने लगता है, बुद्धि में विवेक आ जाता है, आत्मा की समीपता आ जाती है। तब हम दुःख–सुख को यह समझते हैं कि यह तो भगवान की 'रासलीला' है जो कि एक 'उपेक्षित' शब्द है। वास्तव में तो दोनों में आनन्द आता है। जो खिलाड़ी खेलते हैं वे यदि हार भी जायें तो भी वे खुश ही रहते हैं और उनकी विजय हो जाय तो भी प्रसन्नचित्त रहते हैं। दोनों टीमों के जो कैप्टन होते हैं वो खेल शुरु होने से पहले आपस में हाथ मिलाते हैं, खेल खत्म होने पर भी हाथ मिलाते हैं। यह नहीं कि जो टीम हार जाती है वह भाग जाती हो – नहीं, वो प्रसन्नचित्त रहते हैं। वो कहते हैं कि यह तो खेल है इसमें बुरा मानने की क्या बात है। कभी कोई हारता है कभी कोई जीतता है। इसलिये कहते हैं – life is a game (जीवन एक क्रीड़ा है)। Play it well (इसे प्रेम से खेलो) And with sporting spirit (और खेल की भावना के साथ)।

राम की शरण लेने से, ईश्वर के चरणों के करीब होने से हमें शारीरिक और मानसिक बल मिल जाता है, बौद्धिक बल यानी विवेक और वैराग्य उत्पन्न हो जाते हैं और सबसे अधिक बल यह है कि आत्मा निर्लेप होने लगती है। तब ईश्वर की समीपता की अनुभूति होने लगती है। भीतर में कुछ शान्ति, कुछ आनन्द सा अनुभव होता है। विश्वास बढ़ता है। इस अनुभूति को दृढ़ करने के लिए सच्चे सन्तों का सत्संग

करना चाहिए, महापुरुषों के जीवन चरित्र पढ़ने चाहिए, गीता, रामायण जैसे महान ग्रन्थों का अध्ययन करना चाहिए, जीवन को मर्यादा में ढालना चाहिए।

ईश्वर का नाम लेने के साथ मनन–चिन्तन भी करना चाहिए। आख़िर हम कौन हैं ? ईश्वर कौन है ? इस संसार में हम किस लिये आये हैं ? हमारा कर्त्तव्य क्या है ? शास्त्र कहते हैं कि आत्मा और परमात्मा के अतिरिक्त जितना भी भौतिक ज्ञान या जानकारी है, वह अविद्या है। विद्या या ज्ञान वह है जो आत्मा और परमात्मा से सम्बन्धित है। जिस व्यक्ति के मन में यह प्रश्न नहीं उठते हैं कि संसार में किस लिये आया है, वह कौन है, यहाँ आकर उसे क्या करना है, ईश्वर के साथ उसका क्या सम्बन्ध है, आदि – शास्त्र ऐसे व्यक्ति को मूर्ख बताते हैं और सोया हुआ समझते हैं।

ईश्वर के समीप्य की अनुभूति हो जाने पर हमारे भीतर यह प्रश्न उठने शुरु हो जाते हैं –''मैं कौन हूँ ?'' यह पहला प्रश्न उठता है। शंकराचार्य जी कहते हैं कि जिस मनुष्य में यह जानने की जिज्ञासा उत्पन्न हुई है कि 'मैं कौन हूँ' उसे ज्ञान हुआ कि 'तत्वमसि'–तुम तो वही हो जो ईश्वर है (Thou art That)। परन्तु अज्ञानवश हम भूले हुये हैं और समझते हैं कि हम तो यह शरीर ही हैं। अगर कोई पढ़ा–लिखा आदमी होगा तो ज़्यादा से ज़्यादा कहेगा –'मैं मन हूँ, जो सोचता हूँ वही करता हूँ, जो मेरी आदतें हैं मैं वही हूँ।' और इससे भी बढ़कर कोई विद्वान होगा तो वो कहेगा 'मैं बुद्धि हूँ'। अधिकांश लोग सोये हुये हैं। उनको यह मालूम ही नहीं कि मैं कौन हूँ ? महान परमात्मा, अंशी, जो हमारा आधार है, हम उसके अंश हैं, वे यह नहीं समझ पाते। वह परमात्मा है हम आत्मा हैं, वह सागर है हम उसकी एक बूँद हैं। मात्रा में भले ही अन्तर हो परन्तु गुण में एक जैसे हैं। परन्तु हम पर आवरण चढ़े हैं। जब तक वे आवरण दूर होकर ईश्वर के गुण प्रकाशित नहीं होंगे

तब तक भीतर में अशान्ति रहेगी और संसार में दुःखों का अन्त नहीं होगा।

''मोहे अपनी शरण में ले लो राम''

नाम का मतलब यही है कि हम 'राम की शरण लें। शरण का मतलब ही यह है कि हमारा ईश्वर से सम्बन्ध हो जाय, प्रेम हो जाय और हमारी आत्मा ईश्वर में लय हो जाय। नाम एक सीढ़ी है, नामी (ईश्वर) तक पहुँचने की। कबीर साहब के कहने के मुताबिक यह काठ की माला का जाप नहीं है। नाम वो सरेश है जिस प्रकार जब लकड़ी के दो टुकड़े टूट जाते हैं तो उनको जोड़ने के लिये सरेश लगा देते हैं। नाम वह है जो हमारी आत्मा को परमात्मा से मिला देता है नाम वह साधन है, वह किया है जिसके द्वारा हमारी आत्मा परमात्मा में लय हो जाती है और हमें निरन्तर का ज्ञान व अनुभूति हो जाती है कि हम तो वही हैं जो हमारे पिता हैं। हज़रत ईसा कहते हैं –''I and my Father are one''(मैं और मेरे पिता एक ही हैं)। परन्तु साथ ही हमें उपदेश भी देते हैं कि–Be perfect as your father is perfect in the Heaven'' (जिस प्रकार परमात्मा पूर्ण है, ऐ मनुष्य! तू भी वैसा पूर्ण हो)। तब तू परमात्मा के समीप जा सकता है, उससे पहले नहीं।

पूर्णता तक पहुँचने के लिये ही नाम की सीढ़ी पकड़ते हैं। नाम एक ऐसी सीढ़ी है जिसमें प्रार्थना, उपासना, गुरु व ईश्वर से प्रेम, ज्ञान तथा योग सभी आ जाते हैं। जितनी पद्धतियाँ हैं सब नाम में समा जाती हैं। नाम का मतलब है ईश्वर प्रेम या वह साधना जिसके द्वारा हम अपने आपको परमपिता परमात्मा में लय कर देते हैं। जब तक हम पूर्ण नहीं होते तब तक ईश्वर से दूर रहेंगे और जो दुःख–सुख हमें भासते हैं वे भासेंगे। इसलिये इन सब बातों की जो औषधि है – वह नाम है, ईश्वर प्रेम है।

हम पूर्ण कैसे हों, मनुष्य का विकास लाखों साल में हुआ है। उसके भीतर में सभ्यता का इतिहास सारा लिखा है। चित्त पर इस जन्म से लेकर पिछले जन्मों तक की छाया पड़ी हुई है। जब तक इस छाया से हम निवृत्त नहीं होते हैं तब तक हम पूर्ण नहीं हो सकते हैं। पहला साधान है कि उसके समीप हों, जो प्रेम की वृष्टि हम पर हो रही है, उसकी अनुभूति करें। दूसरा यह कि जीवन को ही एक साधना बना लें। केवल 5–10 मिनट सुबह–शाम बैठना ही काफी नहीं है। उससे केवल थोड़ी शक्ति अवश्य मिलती है, आत्मा बलवान होती है परन्तु उससे साधना पूरी नहीं होती।

सारे दिन तो हम अपने भीतर में कूड़ा–करकट इकठ्ठा करते रहते हैं। आँखों, कानों, अपनी वाणी तथा मन के संकल्पों–विकल्पों द्वारा चित्त पर छाया डालते रहते हैं। पुराने संस्कारों के कूड़े के ढेर पर और कूड़ा डालते हैं और आशा करते हैं कि हमें सुख का जीवन प्राप्त हो जाय। इसलिये सारी दिनचर्या को ही यानी प्रातः से लेकर रात तक, सारा समय साधनामय बना देना चाहिए। जो काम करें, हाथ–पाँव, विचार और वाणी द्वारा उसमें ईश्वर की उपस्थिति का भान होता रहे ताकि हम सचेत (alert) रहें कि हमसे कोई बुराई न हो जाय। जो भी कर्म करें अपने सच्चे पिता की प्रसन्नता के लिए करें। कुछ दिन कठिनाई होगी, आगे चलकर यह स्वभाव बन जायेगा।

इस साधना द्वारा जो पुराने संस्कार हैं उन्हें धो डालें और आगे के लिये कोशिश करें कि नये संस्कार न बनें। इसके लिये भगवान कृष्ण ने हमारे ऊपर बड़ी कृपा कर अर्जुन को गीता में जो उपदेश दिया है, उस उपदेश पर चलना चाहिये। यानी कर्म और कर्म–फल के साथ आसक्ति न हो। हमारा स्वभाव ही बन गया है कि हम हर वक्त अपनी परेशानियों में ही डूबे रहते हैं, जैसे बच्चे पास होगें कि नहीं, बच्ची की शादी होगी कि नहीं आदि। परमात्मा के ऊपर भरोसा ही नहीं रखते।

जो कर्म करते हैं उसके साथ हमारा बन्धन होता है। हमने किसी को पचास रुपये दिये तो हम चाहते हैं कि वह हमारे प्रति कृतज्ञता प्रकट करे। यदि कोई बड़ा अफ़सर है तो वह आशा रखता है कि जो भी उसके पास से गुज़रे वो उसको सलाम करे। प्रत्येक व्यक्ति इच्छा रखता है और इच्छा की अग्नि में जलता रहता है। मनुष्य चाहता है कि सारे संसार का धन उसके पास आ जाय और यह आशा करता है कि संसार उसकी इच्छा के अनुसार चले। दोनों बातें पूरी नहीं होतीं, अतः निराशा होती है। इसलिये भगवान कहते हैं कि किसी कर्म और कर्मफल के साथ बन्धन मत रखो। यह बड़ा कठिन है।

अपने कर्म व कर्मफल के साथ बन्धन न हो एवं दूसरा क्या करता है, उसके कर्म के साथ भी बन्धन न हो। हम दिन भर दूसरों की प्रतिक्रिया करते रहते हैं, अपनी नहीं करते हैं। सुबह से लेकर रात तक अख़बार पढ़ते हैं, ख़बरें पढ़ते हैं और सारे दिन प्रतिक्रिया करते रहते हैं कि फलानी जगह यह हो गया, उन्होंने यह कर दिया, यह नहीं किया आदि ऐसी बातें करते रहते हैं। यदि कोई हमसे दुर्व्यव्हार करता है तो हमारे दिल पर जो चोट लगती है उससे हम इतने विचलित हो जाते हैं कि बहुत देर तक अपने को ठीक नहीं कर पाते। भगवान तो कहते हैं कि अपने और दूसरों के कर्म व कर्मफल के साथ चिपकाव छोड़ दो। धीरे-धीरे ईश्वर प्रेम आता जायेगा, पुराने संस्कार धुलते जायेंगे एवं नये आप बनने नहीं देंगे, भीतर में चित्त निर्मल होता चला जायेगा।

जितना चित्त निर्मल होता जायेगा, उतना ही आनन्द, शान्ति और सुख आपको भीतर में अनुभव होगा। एक दिन ऐसा आ सकता है कि आप भीतर में गंगाजल की तरह बिल्कुल निर्मल बन जायें। वह असली स्थान है-आनन्द का, शान्ति का। इन सद्विचारों को अपनाने का अभ्यास करें। सद्गति हो और बुरे कर्म न करें। यह सब बातें नाम में ही आती हैं। इसके साथ महापुरुषों का सत्संग करना, अच्छे-अच्छे

धार्मिक साहित्य को पढ़ना चाहिये। महापुरुषों के जीवन चरित्र से सीख लेनी चाहिये।

थोड़ा सा अभ्यास है जो यदि हम लोग करें तो जो हम शिकायत करते हैं कि हमें दुःख है, शारीरिक, पारिवारिक, आर्थिक–ये बातें भीतर में उठेगी ही नहीं। ऐसा व्यक्ति हमेशा सुख की ही अनुभूति करता है। कोई व्यक्ति ऐसा नहीं जो भीतर में यह इच्छा न ररवता हो कि मुझे कोई दुःख न हो, कोई बिमारी न हो, मेरी कभी मृत्यु न हो, मुझे कभी कोई कठिनाई न हो। इस चाह की पूर्ति के लिये एक ही रास्ता है और वह है 'ईश्वर प्रेम' जो ईश्वर की हजूरी से आरम्भ होता है और अन्त में हम उसी में लय होकर वैसे ही हो जाते हैं जैसे ईश्वर हैं।

कहा जाता है कि यह कहना आसान है, करने में कठिन है। परन्तु महान सुख के लिये कुछ कठिनाई का सामना तो करना ही पड़ेगा, मेहनत तो करनी ही पड़ेगी। एक बच्चा बी.ए. करने के लिये 14–15 वर्ष मेहनत करता है, तो हम परमात्मा को पाने के लिये जो सब सुखों का भण्डार है, जिसकी प्राप्ति के बाद कोई दुःख ही नहीं रहता, मृत्यु भी नहीं आती है, हमें किसी कारण कोई कष्ट नहीं होता है– तो क्या उस महान सुख की प्राप्ति के लिये हम थोड़ी सी कठिनाई को बर्दाश्त नहीं कर सकते ? यह हमारा प्रमाद है। जैसे हमें प्रातः बिस्तर में ही बैड टी (चाय) मिल जाती है, वैसे ही परमात्मा भी हमें प्लेट पर रखा हुआ मिल जाय– इस विचार को, प्रमाद को छोड़ना होगा। मेहनत करनी ही पड़ेगी। जो मेहनत करते हैं वे पाते भी हैं और सुखी भी हैं। जो मेहनत नहीं करते उनके पास सब कुछ होते हुए भी वे भीतर में दुःखी हैं।

उपासना (साधना) आरम्भ करते समय इस धारणा को लेकर मौन होकर बैठें कि हम प्रभु के चरणों में बैठे हैं और उनकी कृपा हम पर बरस रही है। आप प्रभु के जिस भी रूप की पूजा करते हैं, जैसे कोई

भगवान शिव की पूजा करता है, कोई भगवान कृष्ण की, कोई माँ की – तो उसी ख्याल में बैठें कि आप अपने इष्टदेव के चरणों में बैठे हैं और दीन भाव से उनकी कृपा की भिक्षा माँगें। मन ही मन जो आप ईश्वर का या अपने इष्टदेव का नाम लेते हैं वह लेते रहें। भगवान हमें विश्वास दिलाते हैं कि 'जो जिस तरह भी मुझे याद करेगा उसकी साधना की याचना मेरे पास ही पहुँचेगी। मैं सब रूपों में हूँ।' इसलिये किसी को निराश नहीं होना चाहिये।

जो भी साधक जिस प्रकार की भी साधना करता है उसको चाहिए कि उसमें पूरी श्रद्धा रखे और दृढ़ संकल्प के साथ परमात्मा के उस रूप को पकड़े। मन्दिर जाते हैं तो ठीक है, कोई बात नहीं। देवी की पूजा करते हैं ठीक है, करते रहें। भगवान शिव को मानते हैं तो मानिये। भगवान कृष्ण को मानते हैं तो उनकी पूजा करिये। गुरु को मानते हैं तो गुरु का बताया हुआ ध्यान करिये। आत्मा सब में है, परमात्मा सब में है। इसलिए सभी की पूजा, जिस भी रूप में करें, ईश्वर के चरणों तक पहुँचती है।

धन्ना भक्त ने पत्थर के सालिग्राम की पूजा की और उन्होंने दर्शन दिये, उनके साथ बैठ कर खाना खाया, साकार रूप में। नामदेव जी के हाथों से दूध पिया, नदी के दूसरे किनारे से उठकर रविदास जी की झोली में आ विराजे, यानी भगवान की मूर्ति उसमें प्रकट हो गई। रामकृष्ण परमहंस साक्षात् दुर्गा माँ से वार्तालाप किया करते थे। इसमें कोई संदेह नहीं करना चाहिये कि आप जो साधना कर रहे हैं वह सही है– उसमें पूर्ण विश्वास होना चाहिये। सब पूजा परमात्मा की ही है, किसी भी रूप या नाम को लीजिए, सब उसी के रूप हैं, उसी के नाम हैं– सब समस्याओं का समाधान एवं सकल रोगों का उपचार हैं।

श्री करतार स्तुति

नमामि करताराय पादपंकजं, करोति करतार पूजनं सदा।
वदामि करतारायनाम निर्मलं, स्मरामि नारायणतवं व्ययम्।।
अर्थ :– हम सदा प्रभु करतार जी के चरण कमलों को नमन करते हैं, उनका पूजन करते हैं। उनके निर्मल नाम का उच्चारण करते हैं तथा अवस्थित नारायण तत्व का स्मरण करते हैं।

प्रातः स्मरामि करताराय मुखारविन्दं, स्वर्णिमललाटं धवलरेख शुभ्रम्।
आभा मंडलं शोभितं ज्योतिपुंजे, रजत संग्रहे उदितं भास्करायः।।
अर्थ :– प्रातः हम प्रभु करतार के मुखारविन्द का स्मरण करते हैं। जिनके सुनहरे ललाट पर शुभ्र धवल रेखायें हैं तथा जिनके आभामण्डल की ज्योति ऐसे प्रकाशित है जैसे चाँदी के ढेर में उगता सूरज।

प्रातः वन्दनामि करताराय करारविन्दं, नीलाभ नयनं नयनाभिरामं।
गुरुदेव सुधा कृष्णे निमग्नश्य, ईश निर्विकारां वरदं निजेभ्यः।।
अर्थ :– प्रातः हम प्रभु करतार के कर कमलों की वंदना करते हैं। जो सदा अपने गुरु श्री कृष्ण की अमृतधारा में निमग्न रहकर अपने भक्तों को निर्विकार भाव से वर देते हैं तथा जिनके नीले नेत्र आँखों को सुख देने वाले हैं।

प्रातः नमामि करताराय पदारविन्दं शिष्येन्द्र मानस मधुव्रत सेव्यमानं।
चरणरज कमलबिन्दु देहि दयामय, निजाश्रु पच्छालं पगे करतारं।।
अर्थ :– प्रातः हम प्रभु के चरण कमलों को नमन करते हैं, जो भक्तों के मन मधुप सेवित हैं। हम अपने अश्रुजल से प्रभु के पग पखारते हैं। हे दयामय! हमें चरण रज प्रदान कीजिये।

प्रातः वदामि वचसा करतारं, वाग्दोषहारि सकलं शमलैनिहन्ति।
प्रातः श्रये श्रुतिनुतां करतारमूर्ति, ध्येयासमस्ते साधकं मुक्ति हेतुं।।
अर्थ :– प्रातः हम अपनी वाणी से प्रभु का नाम जप करते हैं, जो वाणी दोषों को नाश करने वाली तथा सभी पापों को हरने वाली है। प्रातः हम

करतार मूर्ति का आश्रय लेते हैं। अपने को उनमें विलीन करते हैं, जो सभी साधकों को ध्येय एवं मोक्ष प्रदान करने वाले हैं।

यः श्लोक पंचकमिदं प्रयतः पठेति नित्यं प्रभात समयें भक्तं प्रबुद्धं। रामाश्रम किंकरजनेषु सएव मुख्योभुक्ता,प्रभाति दयाललोकमन्य लभ्यम्।।

अर्थ :– प्रातः जो प्रबुद्ध भक्त नींद से जग कर जितेन्द्रिय भाव से इन पाँच श्लोंको का नियमित पाठ करते हैं वे रामाश्रम सत्संग के सेवकों में मुख्य होकर दयालदेश को प्राप्त होते हैं।

– राजीव रंजन सहाय, पटना

अध्यक्षीय सन्देश

ऐसे गुरु को बल बल जाइए, आप मुक्त मोहे तारे...

हम सब अत्यन्त भाग्यशाली हैं कि हमें एक ऐसे ही महान संत परम पूज्य गुरुदेव डा. करतार सिंह जी की शरण मिली जिनकी असीम कृपा से हमारे न जाने कितने जन्मों के संस्कारों एवं कर्मों से हमें मुक्ति मिल गई। आज भी यह अहसास होता है कि वे यहीं कहीं है और मैं समझता हूँ कि मेरी तरह और भी सत्संगी भाई बहनों को ऐसा महसूस होता होगा। मेरा यह मानना है कि यदि हम आजीवन उनके प्रति अपनी कृतज्ञता व्यक्त करें तो भी कम है। हमारे गुरुदेव दीनता और प्रेम की मूर्ति थे और उनकी मुख्य शिक्षा जिस पर वे सबसे ज़्यादा ज़ोर देते थे वह है ''कृअहंकार से प्रभु नहीं मिलते, दीनता को तो अपनाना ही होगा''।

यह सौभाग्य की बात है कि आज हम सब उनकी 101वीं जन्म जयंती और पहली पुण्य तिथि मना रहे हैं। मेरी आप सब से प्रार्थना है कि हमारी अपने गुरु के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि यही हो सकती है कि हम अपने जीवन में अहंकार को छोड़ कर दीनता को अपनाने का प्रयास करें और जैसा वे हमें बनाना चाहते थे वैसा बनने की कोशिश करें।

– डा. शक्ति कुमार सक्सेना

ब्रह्मलीन परमसंत डा. करतार सिंह जी की 10वीं जन्म जयंती व प्रथम पुण्य तिथि के अवसर पर विशेष

जे जेता जानहीं तेता बखानहीं...

अवर्णनीय का वर्णन कठिन है, फिर भी चेष्टा है उस महान व्यक्तित्व के कुछ पहलुओं तक पहुँचने की जिसके शरीर को सद्गुरु महाराज, पूज्य भाई साहब, या दार जी आदि नामों से सम्बोधित किया जाता था, और जिनके शरीर को इस सदी में पूज्यपाद डा. करतार सिंह जी के नाम से जाना गया।

वे श्रेष्ठ थे उनके लिये जो उन्हें समझ सके थे। कहते हैं कुछ व्यक्ति श्रेष्ठ होते हैं, कुछ श्रेष्ठता प्राप्त कर लेते हैं और कुछ को श्रेष्ठता दे दी जाती है। वे तीनों प्रकार से श्रेष्ठ थे। श्रेष्ठ थे तभी तो शिष्ट थे। शिष्ट ने इष्ट से मिल कर विशिष्टता प्राप्त कर ली। यह उनके इष्ट के प्रति सेवा, समर्पण और सामंजस्य का ही परिणाम था।

मैं अपनी सीमा में रहकर उनके अन्तरम की आध्यात्मिक गहराई (या ऊँचाई) नापने या वर्णन करने का साहस अथवा प्रयास नहीं करूँगा क्योंकि समुद्र को देख कर पानी ही पानी देखने वाला पानी का और उसमें रह रहे जीव जन्तुओ का तथा समुद्र का मंथन करने वाले, उसमें छिपे रत्नों का ही वर्णन करते रहे। ''जो जेता जानहि तेता बखानहि''। अतः जो मुझे आभासित हुआ उसी के कुछ अंश भाई बहनों के लाभार्थ प्रस्तुत करने की कोशिश कर रहा हूँ।

दीन और दुनिया दोनों में दुरुस्त और चुस्त, एक न्यारा और प्यारा, सबका सहारा रहने वाला वह सहज रूप, रंग और अपने गुरु में लीन रहकर, गुरु सेवा में समर्पित एक ऐसी पहचान जो सम–भाव से स्नेहिल, संसार सहित सम्पूर्ण रूप से पूर्ण और पूर्ण रूप से सम्पूर्ण थे। व्यवहार, आचरण, सद्भाव, सेवा, ध्यान, खान पान, रहन सहन और पूजा आदि

में एकदम साधारण और आम आदमी की तरह परिवार में जिम्मेदार तथा सत्संग में सर्वोच्च पद पर होते हुए भी सभी से साथी का ही व्यवहार करते थे।

उनका साकार स्वरूप दृश्य के अदृश्य रहने जैसा और अदृश्य के साथ सम, साकार तथा सार्थक हो चुका था। उनके अन्दर का परम, अन्य सभी के अन्दर के परम जैसा ही है, वे यह मानते थे, समझते और स्वीकार भी करते थे। हर किसी के प्रति अगाध प्रेम, प्रगाढ़ आत्मीयता और अथाह स्नेह रखते थे। अथक सेवा का साकार रूप दिखाई देते थे। उनका स्वभाव था कि अपनी कृपा को बड़े सहज भाव से भाई बहनों में वितरित करते थे।

पूज्य भाई साहब में दृढ़ता और दीनता का अद्‌भुत सामंजस्य उनके जीवन का प्रमुख सूत्र एवं सिद्धांत था। उन्होंने कभी किसी को तिरस्कारा नहीं बल्कि सहारा दे कर स्वयं रवड़ा करने के लिये वे किसी भी सीमा तक जा सकते थे। इतने विशाल सत्संग में हर परिवार और उस परिवार के दुख का पूरा ध्यान रखते थे। अपनी आयु तथा स्वास्थ का ध्यान न रखते हुए भी हर समय सत्संगी भाईयों से हमेशा सम्पर्क बनाए रहते थे और यदि किसी कारणवश नहीं जा पाते तो किसी न किसी को भेजते थे। पत्रों का उत्तर बहुत तत्परता से देना उनका स्वभाव ही नहीं बल्कि अपना उत्तरदायित्व भी मानते थे।

रामाश्रम सत्संग की सर्वाधिक वर्षो तक (1969–2012) सक्रिय सेवा, सर्वोच्च आचार्य, संरक्षक एवं अध्यक्ष के रूप में भाईयों और बहनों को अपनी प्रसादी और आशीर्वाद से लाभांवित करते रहे। उससे पहले अपने गुरुदेव परम आराध्य डा. श्रीकृष्ण लाल जी महाराज के आदेशानुसार सत्संग की सेवा में निरंतर कार्यरत रहे। एक सिख परिवार में जन्में वे एक सच्चे सिख थे। पंजाबी भाषा में 'ष' को 'ख' बोलने की प्रथा है। शिष्य को भी सिक्ख या सिख कहा जाता था। वे अपने गुरु की अपेक्षाओं

के अनुरूप सच्चे गुरुभक्त,सेवा भावी शिष्य का स्थान पाकर उनके उत्तराधिकारी बने और बाद में इस जगत में परमसंत डा. करतार सिंहजी साहब के नाम से जाने गये।

अपने बाल्यकाल में वे हनुमान जी के मंदिर नियमित रूप से जाते थे। यही आस्था, और आस्था की गहनता, आस्था से धर्म और धर्म से कर्म और फिर आध्यात्म में अभिरूचि से आध्यात्म के सागर में समाहित होने का पर्याय बन गया। शायद फिर उन्होंने पीछे मुड़ कर नहीं देखा। यह था उनके मन का दृढ़ भाव। अतः इच्छा, दृढ़ता और विश्वास (जो उनमें थे) ने सारे काम आसान कर दिये। परम पूज्य भाई साहब ने कर्म काण्ड की पूजा में न उलझ कर उसके तत्व, अर्थात आध्यात्म की राह पकड़ ली।

परमश्री की एक ही क्षण में पूर्ण ध्यान में स्थित होने की अद्भुत अवस्था थी। सत्संग हो या भण्डारों की भीड़ या फिर एकाकी अभ्यास, वे क्षणिक समय में ही उस स्थिति को प्राप्त कर लेते थे, जिसे सुषुप्त और जाग्रत की दहलीज़ का भी नाम दिया गया है। पूज्य भाई साहब उन साधकों में से थे जो दूसरों को भी ध्यान लगवाने के कुशल कारीगर थे। उनमें औरों की साधनाओं को परिष्कृत करने वाले चमत्कारी बाज़ीगर और अपनी ओर आकर्षित करते रहने वाले परिमार्जित प्रभाकर की पराकाष्ठा थी। योग शास्त्र में ध्यान से पहले यम नियम और आसन को आवश्यक बताया गया है। वे इसे परम आवश्यक मानते थे।

उनकी व्यावहारिक जीवन शैली यम, नियम और आसन से सुसज्जित थी। अर्जित साधन को ही अपने प्रयोग में लाना, नियमों का पूर्णरूप से पालन करना और आसन में बैठना तथा आसन में बैठे रहना उनकी अभूतपूर्व उपलब्धी थी। वे अपने प्रवचनों में इस ओर विशेष ध्यान दिलाते और विस्तार से चर्चा करते रहते थे। उनकी यह विशेषता थी कि स्वयं कड़ाई से नियम का पालन करने के बावजूद भी उन्होने भाईयों पर कभी

भी इसके पालन के लिये कोई कड़ाई नहीं की। यह शायद उनके स्वभाव की मृदुता का ही परिणाम था जो उनके प्रेम भाव प्रमुख होने से था।

उनके जीवनकाल में ही भण्डारे एक बड़े मेले का रूप लेने लगे थे। उनका राम, उनके राम का व्रत लेने से राम का विशालकाय वृक्ष बन चुका था जिसकी छाया हज़ारों को शीतलता, सैकड़ों को शांति और दसियों को राम के शरणागत करने के लिये सामर्थ्यवान थी। रामायण के राम के साथ घट–घट वासी राम उनमें था, उनसे था तथा उनके लिये था। हम उनके विचारों को साकार करने के लिये उन्हीं से सामर्थ्य की याचना करें क्योंकि वे अब सर्वत्र व्याप्त हो गये हैं। लगता है उन्होनें स्वेच्छा से सहजरूप में समभाव में शरीर त्याग कर दिया। शरीर के नाशवान होने से उन्हें कभी भी शरीर से परहेज़ (या शरीर से दुराव) नहीं रहा। आत्मा के शाशवत् स्वरूप होने से उन्हें उससे लगाव नहीं था। वे आत्मा के सहारे आत्मतत्व में स्थित रह कर परम में विलीन नहीं हुए बल्कि परम में समाहित हो परम ही बन गये। शरीर आत्मा का वाहन है। उनका यह दृढ़ विश्वास था कि शरीर के स्वस्थ रूप के लिये साज संवार उतनी ही आवश्यक है जितनी आत्मा की (स्वयं की) पहचान करना। इसके वे सम्भवतः सर्वश्रेष्ठ आदर्श, उदाहरण जीवन भर बने रहे और आगे श्रेष्ठों में श्रेष्ठ उनका यह स्वरूप हमेशा स्वीकारा जाता रहेगा।

हमारे लिये उनका एक स्पष्ट, आलोकित, परिपूर्ण रूप से सुसज्जित, सुगम और सहज मार्ग है ''मंत्रमुच्चारण सदा सुखी भवाम्यहं'' (गुरु के मंत्र का उच्चारण करके अक्षय सुख पाऊँगा) का संकल्प लें, शांत रहें। गुरु महाराज हम सब पर हमेशा की भाँति अब भी कृपा करें।

– महेश चन्द्र, रेवाड़ी

संस्मरण

दिव्य देन

प्रबल प्रेम के पाले पड़कर,
प्रभु को नियम बदलते देखा।

गुरु की महिमा का वर्णन तो वेदों ओर पुराणों में अनेक प्रकार से किया गया है। उनके लिये कुछ भी असंभव नहीं है। वे चाहें तो पत्थर पर भी दूब उगा सकते हैं। तभी तो कबीर साहब ने कहा है–

तीन लोक नव खंड में, गुरु से बड़ा न कोय,
कर्त्ता करे न करि सके, गुरु चाहे सो होय।

इसी संदर्भ में अपने जीवन की कुछ घटनायें प्रस्तुत कर रहा हूँ।

1. मेरे बड़े लड़के संजय ने सिविल इंजिनियरिंग में डिप्लोमा किया था, लेकिन बहुत प्रयास करने पर भी उसे कोई नौकरी नहीं मिल रही थी। कुछ दिनों पश्चात्त उसने N.H.P.C में लिखित परीक्षा दी और सफल रहा। साक्षात्कार फरीदाबाद में था। साक्षात्कार के बाद उसे लेकर मैं पूज्य गुरुदेव की सेवा में दिल्ली पहुँचा। उन्होंने बेटे की मनःस्थिति को देख लिया और पूछा 'बेटे इन्टरव्यू कैसा रहा?' लड़के ने बताया कि '... जी बहुत अच्छा तो नहीं हुआ'। पूज्य गुरुदेव कुछ गंभीर हो गये और फिर बोले ''बेटे दो चार जगह और परीक्षा दो .... सौ प्रतिक्षत गारंटी है, सफलता अवश्य मिलेगी''। यह कहकर उससे हाथ मिलाया। यकीन मानिये उनकी बात अक्षरक्षः सत्य निकली। गुरुदेव की महान कृपा से वह कलकत्ता रेलवे बोर्ड, भोपाल रेलवे, गोरखपुर रेलवे, पटना रेलवे, फिर N.H.P.C तथा बिहार सरकार सहित छः जगह नौकरी पाने में सफल रहा। वर्तमान में वह बरौनी रेलवे में कार्यरत है।
2. इसी बेटे की शादी के उपरान्त काफी समय तक उसकी पत्नी को

बच्चा नहीं हुआ। हमने उसे एक प्रख्यात महिला चिकित्सक को दिखाया। परिक्षण करने के बाद डाक्टर ने बताया कि उसकी पत्नी माँ नहीं बन सकती। यह जानकर परिवार में सभी बहुत निराश हो गये। पत्नी के कहने पर मैंने पूज्य गुरुदेव से फोन पर इस विषय में बात करना चाहा किन्तु वे बोले 'बेटे बाद में बात करेंगे'। कुछ दिनों के बाद हम सभी पूज्य गुरुदेव की शरण में दिल्ली पहुँचे। मेरी पत्नी ने गुरुदेव से निवेदन किया कि 'बेटे की शादी हुए 4–5 वर्ष हो गये हैं, किन्तु बहु अभी तक माँ नहीं बन सकी है।' गुरुदेव ने फरमाया 'बेटे बच्चा अवश्य होगा, तुम हमसे एक माह बाद फिर मिलना'। और देखिये उनकी ऐसी कृपा हुई कि कुछ ही दिनों बाद बहु गर्भवती हो गई। हम सब की खुशी का तो ठिकाना ही न रहा। समय से बहु की डिलीवरी हुई और उसने एक बेटी को जन्म दिया। किन्तु यहाँ फिर हमें एक और झटका लगा जब डिलीवरी के बाद डाक्टरों ने बताया कि बच्ची के दिल में छेद है। हम लोग काफी चिन्तित हो गये। मैंने हाजीपुर से ही तुरन्त गुरुदेव को फोन किया और उन्हें सारी बात बताई और यह भी बताया कि डाक्टर उसे दिल्ली या मुम्बई ले जाकर ऑपरेशन करवाने की सलाह दे रहे हैं। पूज्य गुरुदेव ने कहा 'बेटे 10–15 दिन बाद या सर्दी कम होने के बाद दिखवाना।'

उनकी आज्ञानुसार कुछ माह पश्चात्त बच्ची को पटना के एक नामी शिशु रोग विशेषज्ञ को दिखवाया। अच्छी तरह जाँच करने बाद डाक्टर ने बताया कि बच्ची का दिल बिल्कुल स्वस्थ व सामान्य है। हमें तो विश्वास ही नहीं हो रहा था। हमने डाक्टर से एक बार फिर जाँच करने का अनुरोध किया। डाक्टर ने हमारी सन्तुष्टि के लिये दुबारा जाँच की और बताया कि बच्ची का दिल एकदम सामान्य है और पर्चे पर लिख दिया ''No murmur'' अर्थात् उसके दिल में कोई छेद नहीं है। यह गुरुदेव की

लीला नहीं तो और क्या है। गुरुदेव ने हमें एक बार फिर एक बड़ी विपत्ती से बचा लिया था। हम सब परिवारी जन उनकी इस अलौकिक कृपा के लिए आजीवन उनके कृतज्ञ व आभारी रहेंगे।

3. मेरे छोटे लड़के डा. अनुज कुमार ने 2011 में M.S किया। उसके पश्चात्त उसने सुपर स्पेशलिटी कोर्स के लिए कोच्ची (केरल) में आवेदन किया। मात्र नौ सीटें ही थी व ऑल इंडिया लेवेल का इम्तहान था। जब वह इम्तहान देने कोच्ची पहुँचा तो पता चला कि इम्तहान तो केवल नाम के लिये है सीटें तो पहले ही 2–2 करोड़ में बेची जा चुकी हैं। मैंने लड़के को समझाया कि 'कोई बात नहीं तुम इम्तहान दो बाकी सब पूज्य गुरुदेव पर छोड़ दो।' एक माह पश्चात्त रिज़ल्ट आया और गुरुदेव की कृपा से उसका selection हो गया। इसके पश्चात पता चला कि दो दिन बाद ही काउन्सिलिंग है और उसके पूर्व 9.7 लाख रुपये का ड्राफ्ट बनवाकर तथा दरभंगा से M.S. का सर्टिफिकेट लेकर कोच्ची पहुँचना है। इतने कम समय में इतनी बड़ी राशि का इन्तजाम करना मेरे लिये तो असभंव था। मैंने सब कुछ गुरुदेव पर छोड़ दिया और मन ही मन उनसे प्रार्थना करने लगा। उस दिन गुरु पूर्णिमा थी। गुरुदेव की कृपा देखिये कि पूजा के तुरन्त बाद ही बेटे का फोन आया कि प्रिंसिपल ने अभी एक लाख की ही राशि देकर सीट बुक कर लेने की इज़ाज़त दे दी है और M.S. के सर्टिफिकेट की original copy न मिल पाने की स्थिति में duplicate copy जमा कराने की भी इज़ाज़त दे दी है। इसके साथ ही जमा कराने की तिथि भी दो दिन बढ़ा दी गई है।

जब लड़का दरभंगा पहुँचा तो पाया कि कार्यालय, पूर्वघोषित अवकाश रद्द करके खोल दिया गया था। फलतः original certificate मिल गया। ड्राफ्ट भी बन गया और हम समय से कोच्ची पहुँच गये व उसे हार्ट के सुपर स्पेशलिटी कोर्स में दाखिला मिल गया। पुनः 15 दिनों के बाद बेटे

की पत्नी डा. नुपुर को भी आपकी कृपा से कोच्ची में ही शिशु रोग विभाग मिल गया।

यह सब पूज्य गुरुदेव की कृपा के बिना संभव नहीं था। यह उनकी कृपा एवं दयालुता की पराकाष्ठा ही थी। छह माह पूर्व ही गुरुदेव जी ने बेटे को आशीर्वाद दिया था कि 'बेटे आप बहुत आगे जायेंगे'। वह आशीर्वाद पूर्ण रूप से फलित हुआ। बेटे ने भी पूज्य गुरुदेव जी की महिमा को स्वीकार किया। गुरुदेव आपका लाख-लाख शुक्रिया।

मेरे पास शब्द नहीं हैं कि मैं उनके बारे में कुछ कह सकूँ। बस इतना ही कहना चाहूँगा –

प्रबल प्रेम के पाले पड़कर, प्रभु को नियम बदलते देखा।
अपना मान भले टल जाये, भक्त का मान न टलते देखा।

– सोनामणि प्रसाद, हाजीपुर

गुरु कृपा

1. 1990 से मैं नियम पूर्वक हर रविवार को सत्संग में जाया करता था और अक्सर अपने घर पर भी सत्संग का आयोजन किया करता था। मेरा घर छोटा था, उसमें दो कमरे थे, एक छोटा और दूसरा बड़ा। छत्त खपरैल की थी और वर्षा होने पर पानी टपकता था। कमरा छोटा होने के कारण सत्संग के दिन घर का सारा सामान बाहर निकालना पड़ता और बाद में अंदर करना होता था। कार्य की कठिनाई को देखते हुये पत्नी घर पर सत्संग करवाने के पक्ष में नहीं होती थी। इस कारणवश मेरी पत्नी से हमेशा तकरार हो जाती थी। मन में यह विचार आता कि अब आगे से सत्संग नहीं लूँगा किन्तु जब रविवार को सत्संग का बँटवारा होता तो मैं सत्संग लेने से अपने आप को रोक नहीं पाता।

जुलाई 1994 की बात है। विनायक बाबू मेरे घर पर सत्संग करा रहे थे कि अचानक वर्षा होने लगी। मेरा मन सत्संग से हटकर चिंता में डूब गया कि पानी गिरेगा तो बहुत बेज़्ज़ती होगी। मैं काफी परेशान हो गया। मन ही मन गुरु महाराज का नाम लेने लगा और उनसे प्रार्थना करने लगा कि वे किसी प्रकार हमें इस बेज़्ज़ती से बचा लें। मेरी प्रार्थना स्वीकार हुई, आधे घंटे तक वर्षा होती रही मगर घर में एक बूँद भी पानी नहीं टपका। यह गुरु महाराज की कृपा ही थी जिसने मुझे लज्जित होने से बचा लिया था।

उस दिन पत्नी को भी गुरुदेव की महानता और दयालुता का अहसास हुआ। उसने उसी क्षण निश्चय कर लिया कि वह भी गुरुदेव से दीक्षा लेने के लिये प्रार्थना करेगी। और अगले बसंत भंडारे में ही उसे दीक्षा मिल गयी। इसके बाद वह सहर्ष प्रेम पूर्वक रविवार के सत्संग का आयोजन करने लगी।

2. यह घटना 2002 की है। एक दबंग व्यक्ति जो पेशे से ठेकेदार था, मुझसे रंगदारी के रूप में बहुत भारी रकम माँग रहा था तथा बहुत परेशान कर रहा था। जून का महीना था। मैंने सोचा कि दिल्ली जाकर गुरु महाराज से यह समस्या बताऊँ। परेशानी का आलम यह था कि मैं उसे मार डालने तक का विचार भी मन में बना चुका था।

रास्ते भर मैं इसी सोच–विचार में पड़ा हुआ दिल्ली जा पहुँचा। सुबह 11 बजे के करीब मैं गुरुदेव के निवास स्थान शास्त्री नगर पहुँचा। पड़ोस की एक सत्संगी बहन ने बताया कि गुरु महाराज अभी नहीं मिलेंगे। गर्मी काफी थी, मुझे समझ नहीं आ रहा था कि कहाँ जाऊँ। तभी अचानक मैंने देखा कि गुरुदेव स्वयं दरवाजा खोलकर खड़े हैं। मैं दौड़कर उनके पास गया, वे मुझे ऊपर ले गये। पहले पानी पिलाया फिर शरबत व मिठाई खिलाई। मेरे कुछ कहने से पहले ही वे बोले ''तुम कुछ नहीं सोचो'', मैं बार बार उनसे अपनी बात कहने की चेष्टा करता रहा लेकिन

मेरे कुछ भी कहने से पहले गुरुदेव कह देते थे ''तुम कुछ नहीं सोचो'' और कम से कम दस बार इस बात को दोहराया। फिर बोले कल रविवार है, तुम आज ही रामनगर, दिल्ली चले जाओ। सुबह का सत्संग करके घर चले जाना। सुबह मुझे सत्संग में पीछे बैठे देखकर आगे बुलाकर बिठाया। फिर पूजा के बाद पुनः बोले ''तुम कुछ नहीं सोचो''। मैं असमंजस की स्थिति में पड़ा हुआ उनके चरणों में प्रणाम कर, घर वापस आ गया।

लगभग एक माह बाद अचानक उस दबंग ठेकेदार से कलक्ट्रेट कम्पाउंड में एक बार फिर आमना सामना हो गया। मैंने मन ही मन गुरु महाराज का ध्यान किया। तभी क्या देखता हूँ कि वह ठेकेदार मेरे सामने आया, और मुझे प्रणाम किया तथा हाथ मिलाकर दोस्ती करने का आग्रह करने लगा। उसका इस प्रकार काया कल्प हुआ देखकर मैं हैरान था। समझ में नहीं आ रहा था कि उसे क्या हो गया है। दसअसल यह गुरु कृपा ही थी, जिसने उस व्यक्ति की सोच को ही बदल दिया था। जो शक्स हमेशा परेशान करने की बात करता था वही आज दोस्ती का हाथ बढ़ा रहा था।

गुरुदेव आपको शत–शत नमन।

– सत्येन्द्र प्रसाद, मुजफ्फरपुर

जीवन दान

1. एक बार गुरुदेव परम पूज्य सरदार जी भाई साहब ने किसी प्रसंग में कहा था कि ''परमात्मा से बड़ा डाक्टर कौन है''। मेरा भी यह विश्वास है कि ईश्वर गुरु रूप में मनुष्य शरीर में प्रकट होते हैं और जो चाहे वो कर सकते हैं। हमारे गुरुदेव परमसंत डाक्टर करतार सिंह जी वास्तव में मनुष्य रूप में परमात्मा ही थे।

एक बार मेरी दाहिनी आँख में दर्द होने लगा। मैंने इस विषय में गुरुदेव को बताया। उन्होंने कहा कि मुगलसराय में एक प्रसिद्ध आँख के डाक्टर हैं, वे दिनेश जी के परिचित भी हैं, अतः मैं दिनेश जी के साथ जाकर उनको दिखा दूँ।

मैंने उनसे निवेदन किया कि 'यह मेरे बस की बात नहीं है, परमात्मा से बड़ा डाक्टर कौन है, मुझे तो आप ही कोई दवा बता दें।' वे लेटे से एकदम उठकर बैठ गये और बोले 'Calcarea flour खालो'। मैंने वह दवा खाई और दर्द बिल्कुल ठीक हो गया।

2. मेरे बड़े भाई सदानन्द लाल जी पुलिस विभाग में कार्यरत थे। एक बार वे फुलवारी शरीफ थाने में पोस्टेड थे। वहाँ अपने घर के बाहर उन्हें रोज़ रात में एक औरत सफेद कपड़े पहने हुये दिखाई देती थी। वह उत्तर से दक्षिण की तरफ जाती फिर वापस उत्तर की तरफ टहलती दिखाई देती थी। उनको कुछ भय हुआ तो उन्होंने पूज्य गुरुदेव को फोन पर इस विषय में बताया। गुरुदेव ने कहा कि वे रोज पूजा में उसके उद्धार के लिए दुआ किया करें। भाई साहब ने ऐसा ही किया। कुछ दिनों के बाद वह गायब हो गई और फिर कभी नहीं दिखाई दी।। गुरुदेव की कृपा से उसका भी उद्धार हो गया।

3. 2010 के दशहरे के भण्डारे के पहले मेरी तबियत काफी खराब हो गई। ऐसा लगने लगा कि मैं नहीं बचूँगा, मेरा आखिरी वक्त आ गया है। अतः सोचा कि भण्डारे पर जाकर गुरुदेव के आखिरी दर्शन कर लूँ। जाने से पहले मैंने एक दिन गुरुदेव को टेलीफोन किया। उन्होने फोन उठाया और मेरे कुछ कहने से पहले ही पूछा ''आपकी उम्र कितनी है? मैंने उत्तर दिया 'Eighty four' उन्होंने दुबारा वही सवाल किया मैंने पुनः कहा 'Eighty four'। इस पर आपने और ज़ोर से बोलने के लिए कहा। मैंने लगभग चिल्लाकर बोला 'चौरासी'। उसी दिन से मेरी तबियत सुधरने लगी।

इसके कुछ समय बाद मैं भण्डारे में पहुँचा। गुरुदेव स्टेज पर कुर्सी पर बैठे थे। मैं पूजा के बाद उनके पास गया और उनके पैर छुये। उन्होंने मेरी तरफ देखा और हाल पूछा तब मैंने इतना ही कहा 'आप देख ही रहे हैं मैं क्या कहूँ।' आपने कहा 'आपकी आवाज ही बतला रही है'। इसके बाद पूज्य शक्ति भाई साहब के आदेशानुसार डा. बी. एस जौहरी जी से दवा लेकर मैं चला आया। गुरुदेव की कृपा से तबियत काफी सुधर गई और आज तक चल रहा हूँ। दवा तो एक बहाना था, उन्होंने तो उसी दिन मुझे जीवन दान दे दिया था, जब टेलीफोन पर मेरी आयु पूछी थी।

– गिरिजानन्द लाल, बक्सर

सब धरती कागज करूँ, लेखवनी सब बनराय।
सात समुद्र की मसि करूँ, गुरु गुन लिखा न जाए।।

गुरु की महिमा का बखान कबीरदास जी ने बड़े ही सरल शब्दों में किया है। सच में जो गुरु के सानिध्य में रहकर जीवन व्यतीत करता है वही उसकी महत्ता को समझ सकता है। मुझे परम सन्त डा. करतार सिंह जी साहिब के सन्निकट जन्मोपरांत जब से होश सम्भाला तभी से रहने का सुअवसर मिला क्योंकि मेरे पिताजी स्व. नन्द प्रसाद जी भी इसी सत्संग परिवार से जुड़े थे। बचपन से ही भण्डारों में जाने का अवसर मिलता रहा। इसलिये मुझे और मेरे बड़े भाई श्री रवीन्द्र कुमार (ददन जी) को बहुत छोटी अवस्था (13वर्ष) में ही पूज्य दादा गुरु महाराज (श्री कृष्ण लाल जी) के आदेशानुसार उनके जीवनकाल में ही डा. करतार सिंह जी साहिब से उनके प्रथम शिष्य के रूप में दीक्षा मिली।

तब से लेकर आज तक जीवन में उनकी कृपा वृष्टि का अनुभव असीम है। मैं अपने आपको बहुत भाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे ऐसे सन्त की कृपा दृष्टि प्राप्त हुयी है कि उसका जितना भी बखान किया जाय उतना ही कम है। हम तुच्छ प्राणियों के लिए पूज्य गुरुदेव ने जो कुछ भी किया वो शब्दों में बयान नहीं किया जा सकता है। फिर भी

कुछ छोटी–छोटी घटनाओं को सबकी सेवा में प्रस्तुत करने का प्रयास कर रहा हूँ।

1. यह घटना 1977 की है। मैं अक्सर दिल्ली उनके निवास स्थान पर जाता रहता था। एक बार मेरी इच्छा हुई कि मैं उनकी फोटो रवीचूँ। मेरे पास कैमरा नहीं था (आज भी नहीं है) इसलिये किसी से माँग कर लिया और दिल्ली पहुँचा। मैंने उनसे प्रार्थना की कि वे मुझे अपनी फोटो रवींचने की अनुमति दें, लेकिन किसी कारणवश उन्होंने मना कर दिया। पर मैं भी बाल हठ करता रहा तो आरिवरकार उन्होंने फोटो रवींचने की अनुमति दे दी। मैंने करीब पैंतिस फोटो रवींचे। जब समस्तीपुर आकर फोटो साफ करवाये तो आश्चर्यचकित रह गया कि उनमें से एक भी फोटो ठीक नहीं आया था। मुझे काफ़ी दुरव भी हुआ। उसके बाद दुबारा दिल्ली जाने पर उन्होंने मुस्करा कर पूछा 'बेटे फोटो कैसी आई'। यह सुनकर मैं हक्का–बक्का रह गया और समझ गया कि यह उनकी ही लीला थी। मैं उनके चरण स्पर्श कर बोला 'आपकी लीला आप ही जानें' तो वे हँस दिये। उनकी लीला अपरम्पार है।
2. बात उस समय की है जब मैं दिल्ली में पूज्य गुरुदेव के निवास पर ठहरा था। शाम के समय मैं पहाड़गंज से दो सेब रवरीद के ले आया और गुरुदेव को दिये। वे बोले इसे ररव दो बाद में रवाया जायेगा। लेकिन मेरी इच्छा हो रही थी कि सेब उसी समय काट कर रवा लूँ। वे मेरी इच्छा को समझ गये और आदेश दिया कि बड़ा सेब जो देरवने में ज्यादा ताज़ा और स्वादिष्ट प्रतीत होता था को फ्रिज में ररव दिया जाय तथा छोटे सेब को काट लिया जाय। किन्तु मेरी इच्छा थी कि शांत होने का नाम ही नहीं ले रही थी। मेरा मन कर रहा था कि बड़ा सेब भी उसी समय रवा लिया जाय। वे सारी बात समझ गये और बोले कि 'जाओ ले आओ और इसे भी काट लो'। मैंने रवुश होकर बड़ा सेब भी काट डाला। किन्तु यह

क्या वह तो अन्दर से बिल्कुल सड़ा था, रवाने योग्य ही नहीं था। तब मुझे झटका सा लगा और समझ में आया कि वे क्यों मना कर रहे थे। मैं ही बालहठ कर बैठा था। वे तो अर्न्तयामी थे। जब सेब के अन्दर की बात जान लेते थे तो भला मेरे मन की बात जानना उनके लिये क्या मुश्किल था। तब से एक नई सीरव मिली कि गुरु से कभी हठ नहीं करना चाहिये।

3. मैं आठ भाई बहनों में तीसरे नम्बर पर था। मुझे फिल्म में हीरो बनने का बड़ा शौक था। उन दिनों मैं स्टेज पर नाटक करता था और बहुत वाहवाही लूटा करता था। भविष्य में पूना जाकर एक्टिंग सीरवने की बहुत इच्छा थी किन्तु इसके लिये पिताजी की इज़ाज़त नहीं थी। वे चाहते थे कि मैं मन लगा कर पढ़ाई करूँ। इसलिए वे मुझे गुरुदेव के पास ले गये ताकि उनसे मेरी शिकायत कर सकें। मैं भी किसी से कम न था, सोचा कि जब गुरुदेव पूछेंगे कि क्या बनना चाहते हो तो झट से कह दूँगा कि मैं हीरो बनना चाहता हूँ। फिर गुरुदेव की सहमती मिल जाने पर पिताजी मुझे रोक नहीं सकेंगे। नहीं जानता था कि गुरुदेव के सामने सारी चतुराई धरी की धरी रह जायेगी। जब उनके समक्ष पहुँचा तो न जाने कैसे सब भूल गया और पूछने पर मुँह से निकला 'मैं डाक्टर बनना चाहता हूँ'। वे हँसकर बाले 'मैं भी यही चाहता हूँ, डाक्टर बनकर सबकी रवूब सेवा करो। होम्योपैथी पढ़ना उसमें सेवा के बहुत अवसर हैं'। मैं लौटकर मुज़फ्फरपुर आया। प्रवेश का समय बीत चुका था किन्तु उनका आदेश था इसलिये प्रयास करता रहा। उनके आशीर्वाद से मुज़फ्फरपुर के ही टुनकीसाह मेडीकल कॉलेज में एडमिशन पाने में सफल रहा। इसके बाद जब मैं दिल्ली गया तो उन्होंने अपनी पढ़ी हुई होम्योपैथी की करीब 32 किताबें मुझे दीं जो आज भी मेरे पास सुरक्षित हैं। पूरे पाँच साल का पढ़ाई का सारा रवर्च भी उन्होंने ही उठाया। पिताजी से बोले 'इसकी चिन्ता न करें ये मेरा

बेटा है'। यहाँ तक कि जब मुज़फ्फरपुर सत्संग के लिये पधारे तो मेरे कॉलेज भी गये और प्रिंसिपल से मेरा सारा रिकॉर्ड माँग कर देखा तथा मेरे बारे में सभी से पूछताछ की। फिर वहाँ से सन्तुष्ट होकर लौटे। इस प्रकार उन्होंने मुझे सिर्फ अपना बेटा माना ही नहीं अपितु पिता के सारे फर्ज़ भी निभाये।

1982 में उनके आदेशानुसार क्लीनिक शुरु किया और चार आना फीस लेकर मरीज़ों की सेवा आरम्भ की। अक्टूबर 2012 तक मात्र छः रुपये ही लेता रहा। यही उनका आदेश था। अनेक कठिनाईयों के बावजूद भी कभी गृहस्थी के काम में बाधा नहीं आयी और कोई काम रुका नहीं। पिछले वर्ष ही पूज्य शक्ति भाई साहब की अनुमति से फीस बढ़ाकर 10 रुपये की।

परम पूज्य गुरुदेव में दीनता, प्रेम, क्षमा, दया और सेवा भाव कूट–कूट कर भरा था। भला कौन इतना प्यार दे सकता था, मेरा इतना ख्याल रख सकता था जितना उन्होंने रखा। विरले ही ऐसे महापुरुष अवतरित होते हैं। उन बीती बातों को, उनके प्यार को याद करके आज भी आँखें नम हो जाती हैं। ऐसे समर्थ सद्गुरु की शरण पाकर जीवन धन्य हो गया। सच ही कहा है

बिन गुरु करम धरम नहीं सूझा।
बिन गुरु ज्ञान ध्यान नहीं पूजा।।

– डा. सुधीर कुमार, मोतीहारी

गुरुदेव उवाच

अनुराग और वैराग्य दोनों से काम लो। किसी चीज़ को अच्छा समझकर क़बूल करना अनुराग और किसी को बुरा समझकर छोड़ना वैराग्य है। जो वस्तु ईश्वर की तरफ़ को ले जाती है उसे पकड़ो, वही अनुराग है और जो वस्तु ईश्वर से छुड़ाती है उसे छोड़ते चलो, यही वैराग्य है। दोनों का लक्ष्य एक ही है।

अनमोल वाक्य-मणियाँ (डा. करतार सिंह जी)

- ईश्वर सत् स्वरूप है। मनुष्य के भीतर जो आत्मा बैठी हुई है वह भी 'सत् स्वरूप है।
- जो आत्मा के गुण हैं, परमात्मा के गुण हैं, वे हमारे व्यवहार में आने चाहिए।
- कैसी भी परिस्थिति आ जाये उसमें हमारा मन विचलित न हो।
- जिस भी परिस्थिति में रहो शान्त रहो, यह आत्मा का स्वरूप है।
- मन से मुक्त होकर ज्ञान को अपनाओ। ज्ञान और अज्ञान, वैराग्य और अनुराग दोनों से मुक्त होओ।
- जितनी इन्द्रियाँ हैं, मन है, वे बुद्धि के अधीन हो जायें और आत्मा से प्रकाश लें।
- कुछ भी कर्म करो उसके साथ कोई बन्धन न हो।
- जीवन की कला यह है कि हम कमल पुष्प की तरह रहें, सदा खिले हुये आनन्दित रहें।
- हमारी साधना का परिणाम यह होना चाहिए कि हमारा चित्त शुद्ध हो जाये – हमारा व्यवहार भी निर्मल हो जाये।
- अपनी कोई इच्छा न रखें अपने आप को मृत सरीखा बना दें।
- सन्त लोग अन्दर से ईश्वर में लीन रहते हैं और शरीर स्वतः अपने आप काम करता रहता है।
- वास्तविक गुरु तो केवल ईश्वर होता है।

राम संदेश के नियम

1. आध्यात्मिक विद्या के गुप्त और अनुभवी रहस्यों तथा सदाचार–शिक्षा को सरल भाषा में जनता तक पहुँचाना हमारी राम सन्देश पत्रिका का मुख्य उद्देश्य है।
2. राम–सन्देश में आत्मिक, नैतिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक उन्नति के लेख ही छपते हैं, राजनैतिक या रोमांचक लेख नहीं। रचनाओं में काट–छाँट करने अथवा छापने या न छापने की स्वतंत्रता सम्पादक को है।
3. राम सन्देश का वर्ष जनवरी में आरम्भ होता है। वार्षिक चन्दा 20 (बीस) रुपये है। एक वर्ष से कम तथा आजीवन ग्राहक नहीं बनाये जाते। चन्दा दशहरा भंडारों में या मैनेजर, राम संदेश को, 9–रामाकृष्णा कॉलोनी, जी. टी. रोड, ग़ाजियाबाद (उ.प्र.) 201009 के पते पर दिसम्बर के अंत तक अवश्य भिजवा दें।
4. राम सन्देश डाक द्वारा नहीं भेजा जाता है। इसका वितरण भंडारों पर ही किया जाता है। कृपया अपनी प्रति लेना न भूलें।

राम संदेश

रजि. ऑफिस

9 – रामकृष्ण कॉलोनी, जी.टी. रोड,
गाज़ियाबाद – 201009

मुद्रक, प्रकाशक व संपादक : डॉ. शक्ति कुमार सक्सेना

मुद्रण : अंकोर पब्लिशर्स (प्रा.) लिमिटेड, बी–66, सैक्टर–6, नोएडा–201301